प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी–शिक्षक के लिए चुनौती

अन्विति सिंह*

विभिन्न सरकारी प्रयासों के तहत प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षार्थियों की सँख्या में अपार वृद्धि हुई है। इनमें बड़ी सँख्या ऐसे शिक्षार्थियों की है जो प्रथम पीढ़ी के हैं। इन शिक्षार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताएँ होती हैं जिन्हें सीमित समय एवं संसाधनों में पूरा करना किसी भी शिक्षक के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। क्या शिक्षक इस चुनौती का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए तैयार हैं? यदि नहीं तो क्यों? उन्हें इसका सामना कैसे करना चाहिए? इस लेख में इन्हीं प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ने की कोशिश की गई है।

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए सरकार कई तरह के कार्यक्रम चला रही है। इनमें सबसे वृहद कार्यक्रम सर्वशिक्षा अभियान है। इसके अंतर्गत किए जा रहे प्रयासों के फलस्वरूप विद्यालयों में शिक्षार्थियों की सँख्या में अपार वृद्धि हुई है। इनमें बड़ी सँख्या में शिक्षार्थी प्रथम पीढ़ी के हैं, अर्थात ऐसे शिक्षार्थी जिनके माता–पिता ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी नहीं की। प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है, जिन्होंने पहली बार घर से निकलकर विद्यालय का रुख किया है। भले ही विद्यालयों में दाखिला लेने वाले शिक्षार्थियों की सँख्या में अपार वृद्धि हुई है लेकिन ये बच्चे विद्यालय में नहीं टिकते। प्राथमिक (कक्षा 1 से 5) अथवा प्रारंभिक (कक्षा 1 से 8) शिक्षा पूरी होने के पूर्व ही बहुत से विद्यार्थी विद्यालय छोड़ देते हैं जिनमें से अधिकाँश प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी होते हैं। इनके विद्यालय छोड़कर चले जाने के बहुत से सामाजिक–आर्थिक कारण गिनाए जाते हैं लेकिन उनके शैक्षिक कारणों की कहीं कोई खास चर्चा सुनाई नहीं देती। गौर से देखें तो विद्यालय छोड़ने की समस्या की जड़ कहीं बहुत गहरे हमारी शिक्षा व्यवस्था में ही निहित है जिसकी पड़ताल की जानी आवश्यक है। इसके लिए हमें बच्चों की सीखने की प्रक्रिया के बारे में संक्षेप में जानना होगा।

पियाजे के अनुसार बच्चों में सीखने की नैसर्गिक क्षमता होती है। वे आंतरिक रूप से सीखने के लिए अभिप्रेरित होते हैं। वे सीखते हैं क्योंकि उनकी दिमागी संरचना प्राकृतिक

**शोध छात्रा*, द्वारा– आलोक कुमार राव, 17–डी–शॉप प्लॉट टाइप, पाण्डवनगर, दिल्ली–92

रूप से अपने परिवेश से सामंजस्य बिठाने के लिए विभिन्न संकल्पनाओं, अवधारणाओं एवं सोच- विचार के तरीके विकसित करने में सक्षम होती है।

बच्चों का यह बौद्धिक विकास सामाजिक एवं भौतिक परिवेश में होता है। सामाजिक परिवेश में विद्यार्थी व्यक्तियों के संपर्क में आते हैं और भाषा, संस्कृति, रहन-सहन इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। वे भौतिक परिवेश में विभिन्न वस्तुओं के संपर्क में आते हैं और आकार, आयतन, मात्रा, ठोस, द्रव, सजीव निर्जीव इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। अर्थात अपने परिवेश से वे भाषा ग्रहण करते हैं एवं विभिन्न प्राकृतिक, सामाजिक वस्तुओं एवं घटनाओं का परिचय प्राप्त करते हैं। बच्चों का यह परिवेश एक समान नहीं होता। वे विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों एवं परिवारों से आते हैं। अतः निश्चित है कि उनके परिवेश में विभिन्नता पाई जाएगी। विद्यालय जाने से पूर्व एवं बाद में बच्चे हमेशा अपने परिवेश से कुछ-न-कुछ ग्रहण करते रहते हैं जो उनके बौद्धिक विकास में सहायक होता है।

बच्चे का बौद्धिक विकास केवल परिवेश पर निर्भर नहीं करता बल्कि स्वयं उस पर भी करता है। बच्चे नैसर्गिक रूप से सीखने में सक्षम होते हैं। अतः वे न सिर्फ ज्ञान ग्रहण करते हैं बल्कि उसका सृजन भी करते हैं। वे अपने परिवेशजनित अनुभवों के आधार पर अवधारणाएँ, समझ और विचार शक्ति का सृजन करते हैं। ज्ञान का सृजन करने की यह क्षमता हर बच्चे में होती है।

बच्चे अपने परिवेश से जो भी सीखते हैं वे अपनी गति से सीखते हैं। वहाँ उनके सीखने की प्रक्रिया उन्मुक्त, स्वतः स्फूर्त एवं नियम रहित होती है।

विद्यालय वह स्थान है जहाँ एक निश्चित समय में एक निश्चित योजना के अनुसार एक निश्चित पाठ्यक्रम द्वारा शिक्षार्थियों को शिक्षा दी जाती है। यह प्रक्रिया अनुशासित एवं नियमबद्ध होती है। विद्यालय का परिवेश बच्चों के पारिवारिक परिवेश से सर्वथा भिन्न होता है। इस योजना से सामंजस्य बिठाना सामान्य बच्चों के लिए भी कठिन होता है, लेकिन पारिवारिक सहयोग से कुछ ही समय में वे इस परिवेश के अभ्यस्त हो जाते हैं। प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी सुविधा वंचित समूह के बच्चों में आते हैं। ये शिक्षार्थी स्वयं को विद्यालय की किसी भी घटना/प्रक्रिया से नहीं जोड़ पाते, चाहे वह पाठ्यपुस्तक में छपी सामग्री हो या फिर शिक्षण विधियाँ अथवा अध्यापकों का व्यवहार (कुमारी, 2008)।

उपरोक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों को विद्यालय के परिवेश से सामंजस्य बिठाने में बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन्हें सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं के साथ-साथ विभिन्न मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है।

ये बच्चे ऐसे परिवारों से आते हैं जिनकी कोई शैक्षिक पृष्ठभूमि नहीं होती। इनके परिवार वाले आमतौर पर निरक्षर होते हैं इसलिए इन्हें अपने घर से शिक्षा प्रक्रिया में कोई सहायता नहीं मिल पाती। इनका परिवेश भी शैक्षिक रूप से समृद्ध नहीं होता। अतः ये बच्चे धीरे-धीरे औरों के मुकाबले पिछड़ जाते हैं।

ऐसा देखा गया है कि विद्यालय में ये शिक्षार्थी विचारों को अभिव्यक्त करने में झिझकते हैं। वे अपनी भावनाएँ, समस्याएँ एवं विचार अपने सहपाठियों एवं शिक्षक के साथ बाँट नहीं पाते। उनके पढ़ने की गति भी औरों के मुकाबले धीमी होती है जो उनकी समस्याओं में बढ़ोत्तरी करती है। बहुत बार ये समस्याएँ उनके विद्यालय छोड़ने का कारण भी बन जाती हैं (कुमार 2008)।

इन बच्चों में आत्मविश्वास की कमी पाई जाती है। ये बच्चे विविध गतिविधियों में हिस्सा लेने से कतराते हैं और अधिकतर अलग-थलग रहने का प्रयास करते हैं।

इनके पारिवारिक एवं विद्यालयी परिवेश में बहुत अंतर होता है। इस दो तरह के परिवेश से सामंजस्य बिठाने में बच्चे बहुत-सी मनोवैज्ञानिक समस्याओं के शिकार हो जाते हैं। अपने माता-पिता से इन्हें किसी प्रकार का शैक्षिक, व्यावसायिक अथवा व्यक्तिगत निर्देशन नहीं मिल पाता। परिवार द्वारा इनके अंदर अपेक्षित मूल्यों एवं अभिवृत्तियों का विकास भी नहीं हो पाता। कक्षा में शिक्षक भी इनके प्रति अपेक्षित ध्यान नहीं देते। कमजोर बच्चों के पीछे शिक्षक अपना समय बर्बाद नहीं करना चाहते। वे मान लेते हैं कि ये बच्चे कभी पढ़ नहीं पाएंगे। जबकि—

> *''पढ़ना सही ढंग से सीखने के लिए यह जरुरी है कि हर बच्चे को शिक्षक पर्याप्त समय अलग से दें''* (पाण्डे, 2008)।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) कहती है—

> *''अगर शिक्षा को जीने के लोकतांत्रिक तरीकों को सुदृढ़ करना है तो उसे स्कूल जानेवाली पहली पीढ़ी की उपस्थिति का भी ध्यान रखना ही होगा जिसका स्कूल में बने रहना उस संविधान संशोधन के चलते अनिवार्य हो गया है जिसने आरंभिक शिक्षा को हर बच्चे का मौलिक अधिकार बना दिया है''।*

यही नहीं, आगे यह कहती है कि—

> *''.. शिक्षा का अधिकार अब एक मौलिक अधिकार बन गया है जिसका आशय है कि ऐसे लाखों बच्चों का नामाँकन होगा जो प्रथम पीढ़ी के विद्यार्थी हैं। ऐसे तत्त्वों को स्कूल में बनाए रखने के लिए व्यवस्था को जिसमें निजी क्षेत्र भी शामिल हैं यह मानना होगा कि बचपन कई तरह के हैं और उभरते हुए परिदृश्य में क्षमता, व्यक्तित्व और आकाँक्षाओं का कोई एक मानक काम नहीं कर सकता। स्कूल प्रशासकों और शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि जब सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और क्षमता वाले लड़के-लड़कियाँ एक साथ पढ़ते हैं तो कक्षा का वातावरण और भी समृद्ध तथा प्रेरक हो जाता है।''*

स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम के निर्माण तथा विद्यालय में उसके क्रियान्वयन के दौरान प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों का ध्यान रखना आवश्यक है।

हमारे विद्यालयों की कक्षाएँ भारतीय समाज की बहुलता तथा विविधता को दर्शाती हैं। यही वजह है कि एन.सी.एफ.टी.ई. (2009) के अनुसार शिक्षक को न सिर्फ पढ़ाने का ज्ञान होना चाहिए बल्कि उसे विद्यार्थी तथा उसके माता-पिता एवं समुदाय का भी ज्ञान होना चाहिए जिससे बच्चे विद्यालय नियमित रूप से आएँ और पढ़ें। इससे

इस तथ्य की पुष्टि होती है कि शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। शिक्षक ही वह व्यक्ति है जो किसी विद्यार्थी को विद्यालय आने के लिए प्रेरित कर सकता है।

एन.सी.एफ. 2005 ने शिक्षक की परिकल्पना एक ऐसे व्यक्ति के रूप में की है जो बच्चे के सीखने की प्रक्रिया में इस प्रकार सहायता करता है कि बच्चा स्वयं ज्ञान का सृजन करता है। इस प्रक्रिया में शिक्षक ज्ञान का सहसृजक होता है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) में शिक्षक को शारीरिक दंड से दूर रहने के लिए कहा गया है। हम देखते हैं कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा से लेकर शिक्षा का अधिकार अधिनियम तक, सबमें शिक्षक की भूमिका को बहुत महत्व दिया गया है।

यहाँ यह विचारणीय है कि क्या वर्तमान में विद्यालयों में शिक्षक अपनी भूमिका का निर्वाह पूरी ईमानदारी से कर रहें हैं? और यदि नहीं तो क्यों? शोध दर्शाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों एवं शहर के झुग्गी-झोंपड़ी वाले क्षेत्रों के विद्यालयों से शिक्षक प्राय: अनुपस्थित ही रहते हैं। यदि आते भी हैं तो अध्यापन कार्य में बहुत ही कम समय देते हैं। मल्टीग्रेड विद्यालयों की स्थिति तो और भी खराब है। वहाँ एक दिन में एक समूह को शिक्षक कभी-कभी 25 मिनट से भी कम समय दे पाते हैं।

आदिवासी क्षेत्रों के विद्यालयों में आदिवासी बच्चों का नामाँकन करते समय प्रधानाध्यापक उनसे उनकी पहचान छीन लेते हैं अर्थात् उनका नाम बदल दिया जाता है जो सीधे-सीधे उनकी संस्कृति पर हमला है। आवासीय विद्यालयों की स्थिति इतनी खराब है कि कम ही बच्चे वहाँ से अपनी शिक्षा पूरी कर पाते हैं।

शिक्षक बच्चों को शारीरिक दण्ड देने के साथ-साथ कभी-कभी उनसे कूड़ा तक उठवाते हैं। कक्षा में पढ़ाते समय फोन पर बात करना और बच्चों को प्रश्न पूछने से निरुत्साहित करना शिक्षकों के लिए आम बात है। (*टाइम्स ऑफ इण्डिया*, 15 जुलाई 2010)

शिक्षकों के ऐसे व्यवहार के लिए बहुत हद तक सरकारी नीतियाँ जिम्मेदार हैं। शिक्षकों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए पैरा शिक्षकों की एक ऐसी फौज तैयार कर दी गई है जो कि प्रशिक्षित नहीं है। अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नाम से संबोधित जैसे शिक्षा कर्मी एवं गुरुजी (मध्य प्रदेश), शिक्षा मित्र (उत्तर प्रदेश)। ये शिक्षक कम वेतनमान पर नियमित शिक्षकों के बराबर और कभी-कभी उनसे भी अधिक कार्य करते हैं। ये शिक्षक असंतुष्ट होते है और यह असंतुष्टि कक्षाओं में अध्यापन कार्य के दौरान साफ नज़र आती है।

ऐसा नहीं है कि प्रशिक्षित शिक्षक अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह उचित ढंग से कर रहे हैं। कारण यह कि शिक्षक प्रशिक्षक कार्यक्रमों के द्वारा शिक्षकों को इस तरह से प्रशिक्षित ही नहीं किया जाता कि वे कक्षाओं के विविधता पूर्ण परिवेश को सही ढंग से संचालित कर पाएँ। अब भी बहुत से शिक्षक मानते हैं कि ज्ञान देने की वस्तु है न की सृजित करने की।

विद्यार्थियों के सांस्कृतिक-सामाजिक ज्ञान को दिन प्रतिदिन के शिक्षण कार्य से इसे जोड़ना कि शिक्षार्थी स्वयं ज्ञान का सृजन कर पाएँ—इस कला से अधिकाँश प्रशिक्षित शिक्षक भी परीचित

नहीं हैं और यदि हैं भी तो विभिन्न कारणों से इसे कक्षा में अपनाते नहीं।

परीक्षा केंद्रित एवं पाठ्यपुस्तक केंद्रित इस शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा पूर्व पाठ्यपुस्तक में दी हुई विषयवुस्तु को खत्म कराने की जद्दोजहद में शिक्षक इस कदर उलझकर रह जाते हैं कि वे शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य—शिक्षार्थी के विकास की तरफ से ही उदासीन हो जाते हैं।

हम जानते हैं कि हमारे विद्यालय संसाधनों की कमी से जूझ रहे हैं इसलिए शिक्षकों को विद्यालयों में बहुत-सी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं। इन कठिनाइयों के बीच भी शिक्षक यदि चाहें तो प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों की बहुत-सी समस्याएँ दूर हो सकती हैं क्योंकि उन्हें प्रेम, विश्वास और आत्मीयता चाहिए जो सिर्फ शिक्षक ही दे सकता है (पाण्डे, 2008)। शिक्षक बच्चे को यह विश्वास दिला दे कि वह उस पर ध्यान दे रहा है, बस उसे यही चाहिए।

शिक्षक को अपनी शैक्षिक गतिविधियाँ इस प्रकार संचालित करनी चाहिए कि बच्चों को आपस में बातचीत करने के अधिक-से-अधिक अवसर मिलें। इससे वे अपने अनुभवों को एक दूसरे से बाँट पाएँगें और उनके अनुभव का दायरा विस्तृत होगा।

प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास की कमी पाई जाती है। यदि शिक्षक उनकी योग्यता एवं प्रतिभा पर विश्वास करेंगें तो निश्चित ही उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा।

प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चे अधिक होते हैं। उन्हें उनकी मातृभाषा ही आती है जबकि अधिकाँश विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषाएँ होती हैं। ऐसे में उन्हें भाषागत समस्याओं से जूझना पड़ता है। कक्षा में शिक्षक को इन बच्चों का ध्यान रखना चाहिए तथा इनसे बात करते समय यथासंभव सरल भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

शिक्षक को अपने उदाहरणों एवं प्रश्नों में विविधतापूर्ण नाम प्रयोग में लाने चाहिए जिससे कक्षा के सारे बच्चों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का प्रतिनिधित्व हो सके और वे कक्षा के अध्यापन प्रक्रिया से स्वयं को जोड़ सकें। ऐसा करने से प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी स्वयं को मुख्यधारा से जुड़ा हुआ महसूस करेंगे। ये शिक्षार्थी सबके सामने अपने विचार, भाव एवं अनुभव प्रकट करने में संकोच करते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इन्हे सोचने समझने के लिए थोड़ा अधिक समय दिया जाए जिससे वे घबराहट न महसूस करें और सुसंगत भाषा में अपने विचार, भाव, और अनुभव सबके सामने रख पाएँ। एक ऐसा सकारात्मक परिवेश जहाँ शिक्षार्थी बे-हिचक एक दूसरे से अपने अनुभव बाँट पाएँ। सामाजिक, सांस्कृतिक विलगाव दूर करने में सक्षम होता है और शिक्षार्थियों में एकता की भावना पनपने का अवसर भी देता है।

यह भी बहुत आवश्यक है कि इन शिक्षार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताओं का ध्यान तो रखा जाए लेकिन इस बात का उन्हें अहसास न हो कि वे अलग हैं क्योंकि इससे उनमें हीन भावना भी पनप सकती है जो उनके स्वस्थ शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए हितकर नहीं।

गाँधी जी के बुनियादी शिक्षा के सिद्धांत प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए बहुत उपयोगी हैं। शिक्षा की इस योजना में बच्चों में शारीरिक श्रम के प्रति सम्मान तथा दूसरों के साथ मिल-जुलकर काम करने की प्रवृत्ति के विकास पर विशेष जोर दिया जाता है। इससे किसी भी प्रकार का काम करने में उन्हें अरुचि या घृणा नहीं होती और हीनता की भावना भी नहीं आती।

योग्यता और प्रतिभा में ये बच्चे किसी से कम नहीं। यदि कहीं कमी है तो वह वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में है जहाँ हर बच्चे की योग्यता और प्रतिभा को विकसित होने का समान अवसर नहीं मिलता। इस शिक्षा व्यवस्था में सकारात्मक परिवर्तन तो हो रहे हैं लेकिन धीमी गति से। शिक्षक यदि चाहें तो इस व्यवस्था में भी अपनी इच्छाशक्ति से यथासंभव इन बच्चों को आगे बढ़ने एवं विकसित होने का पूरा अवसर दे सकते हैं।

आज के शिक्षकों को विविधतापूर्ण परिवेश में शिक्षा प्रक्रिया से जुड़ने का अवसर मिला है। इस अवसर का सदुपयोग करते हुए उन्हें अपनी शैक्षिक गतिविधियों में प्रत्येक बच्चे के अनुभवों को पिरोने का प्रयास करना चाहिए इससे बच्चों को विभिन्न संस्कृतियों, भाषाओं एवं धर्मों की जानकारी तो मिलेगी ही, उनके स्वयं के अनुभव का दायरा भी विस्तृत होगा।

संदर्भ

कुमार, कृष्ण. 2008. अशोक की कहानी, *पढने की दहलीज पर,* संपादक-लता पाण्डे, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली

कुमारी, शारदा. 2008. सही मायनों में आखिर 'पढ़ना' है क्या? *पढ़ने की दहलीज पर*, संपादक-लता पाण्डे, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

एन.सी.ई.आर.टी., *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर टीचर एजुकेशन 2009,* नई दिल्ली

एन.सी.ई.आर.टी., *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, नई दिल्ली

पाण्डे, लता. 2008. *पढ़ने की दहलीज पर,* एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

पुष्करणा, नेहा. 2010. एवरी पोस्टकार्ड हैड स्टोरी टू टैल. *टाइम्स ऑफ इंडिया*, 15 जुलाई 2010, नई दिल्ली

प्रोब. 1999. *पब्लिक रिपोर्ट ऑन बेसिक एजुकेशन,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली

दिल्ली में लड़कियों के स्वतंत्र मदरसों का जैंडर परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत एक शोध अध्ययन

सुषमा जयरथ*

प्रस्तुत लेख दिल्ली के ओखला क्षेत्र में जामिया नगर स्थित लड़कियों के चार स्वतंत्र मदरसों पर आधारित है। इस लेख के माध्यम से जामिया नगर में संचालित लड़कियों के मदरसों का जैंडर परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत एक शोध अध्ययन हेतु विश्लेषण किया गया है, जिसके तहत इन मदरसों की विचारधारा, पाठयक्रम तथा विभिन्न पणधारियों के विचारों को समझने का प्रयास किया गया है।

सच्चर कमेटी 2005-06 की रिपोर्ट से मुस्लिम लड़कियों की वास्तविक स्थिति जानने के पश्चात् यह अनुभव हुआ कि मुस्लिम समाज लड़कियों की शिक्षा एवं सशक्तिकरण के प्रति उतना जागरूक नहीं है। यद्यपि भारत में बहुत पहले से ही मदरसा शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत लड़कियों को भी शिक्षा दी जाती रही है परंतु 1990 के बाद ही दिल्ली में ऐसे मदरसे अस्तित्व में आए, जो लड़कियों के लिए खोले गये थे और ऐसा प्रतीत होता है कि इन मदरसों से भी बहुत अधिक परिवर्तन नहीं हो पाया। आँकड़ों पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि मुस्लिम लड़कियों की शैक्षिक स्थिति अन्य समुदायों की तुलना में बहुत पीछे है। ऐसी स्थिति को देखते हुए जैंडर परिप्रेक्ष्य पर आधारित मदरसा परियोजना के इस शोध कार्य से मुस्लिम लड़कियों की शिक्षा, विकास तथा सशक्तिकरण के संबंध में गहराई से जानने का प्रयत्न किया गया है। इस परियोजना के अनुभवों को इस लेख में कलमबद्ध किया गया है। यह लेख मदरसों के मुख्य उद्देश्यों, लड़कियों के नामाँकन तथा स्थिति, उनके शिक्षा त्यागने (ड्रॉपआउट) के कारण तथा अध्यापकों, छात्रों व छात्राओं के बीच अंतर्क्रियाओं को सम्मिलित करता है। इस शोध कार्य के दौरान ओखला क्षेत्र

**प्रोफ़ेसर*, महिला अध्ययन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली

से जामिया नगर के चार लड़कियों के मदरसों के सर्वेक्षण के लिए प्रश्नावली तथा साक्षात्कार सूचियों का प्रयोग किया गया। यह साक्षात्कार सूचियाँ छात्राओं से लेकर समुदाय प्रबंधक तक के लिए बनाई गई, जिसमें मदरसा, शिक्षा व विकास तथा लैंगिक संवेदनशीलता से संबंधित प्रश्नों को पूछा गया। गहराई से सर्वेक्षण एवं विश्लेषण करने के बाद मदरसों से संबंधित प्राप्त जानकारी निम्न पृष्ठों में प्रस्तुत है—

मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा में कक्षा अभ्यास के दौरान छात्राएं शिक्षा ग्रहण करती हुई

निम्नलिखित मदरसों में बुनियादी तौर पर आलमियत (कक्षा 12) के स्तर तक की शिक्षा दी जाती है–

क्रम सं.	*मदरसों के नाम व पता*
1	**जामियतुल बनात अल इस्लामिया** (बी–112, गली न. 7, कालिन्दी रोड, शाहीन बाग, जामिया नगर, ओखला, नई दिल्ली)
2	**जामिया ख़ैरुन्निसा** (डी–154, शाहीन बाग, जामिया नगर, ओखला, नई दिल्ली)
3	**महाद उम्मे सलमा** (एफ़–209/9 शाहीन बाग, जामिया नगर, ओखला, नई दिल्ली)
4	**आयशा सिद्दीका शरीयत कॉलेज** (4 जोगाबाई, जामिया नगर, ओखला, नई दिल्ली)

मदरसों की विचारधारा

उपरोक्त मदरसों के नाज़िमों एवं प्रबंधकों से प्रश्नावली सूची द्वारा तथा बातचीत से यह पाया गया कि यह सभी मदरसे अलग–अलग विचारधारा के अनुसार संचालित हैं। जैसा कि जामियतुल बनात और महाद उम्मे सलमा पूर्ण रूप से देवबंदी विचारधारा को मानते हैं। जबकि मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा देवबंद और दारुल उलूम नदवा दोनों का मिश्रण है तथा आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कालेज पूरी तरह से अहले हदीस विचारधारा पर आधारित है।

देवबंदी विचारधारा सबसे पुरानी है जो औरंगज़ेब के राजकाल के दौरान दर्सेनिज़ामी पाठ्यक्रम द्वारा संचालित हुई। जबकि नदवा विचारधारा में आधुनिकता की झलक है। अहले हदीस पूरी तरह से परंपरावादी विचारधारा है। इसके अतिरिक्त एक और विचारधारा के मदरसे भी अलग–अलग क्षेत्रों में संचालित हैं जो कि बरेलवी के नाम से विख्यात हैं। यह विचारधारा लगभग देवबंदी विचारधारा पर आधारित है। यह सभी विचारधाराएँ इस्लामी धार्मिक अध्ययन के कारण समयानुसार अस्तित्व में आई हैं।

मदरसों की स्थापना

दिल्ली में अधिकाशत: लड़कियों के मदरसों की स्थापना 1990 के बाद हुई। उपरोक्त मदरसों में सबसे प्रथम मदरसा जामियतुल बनात अल इस्लामिया है, जिसकी स्थापना सन् 1996 ई. में हुई। सर्वेक्षण के दौरान मदरसा जामियतुल बनात के प्रधानाचार्य व नाज़िम से बातचीत करने पर ज्ञात हुआ कि यह मदरसा पहले दक्षिण निज़ामुद्दीन क्षेत्र में स्थापित

किया गया था और अब भी वहाँ संचालित है, परंतु जब छात्राओं की सँख्या बढ़ी तो जगह की कमी के कारण दूसरा मदरसा बनाने की आवश्यकता अनुभव की गई जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में एक और मदरसा बना जो कि मुख्य इसी नाम से बनाया गया। मदरसा महाद उम्मे सलमा की स्थापना सन् 1998 में हुई थी। मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा की स्थापना सन् 2000 में हुई थी जैसा कि इस मदरसे की प्रधानाचार्या ने बताया। मदरसा आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कॉलेज की स्थापना 2005 में हुई। इन सब मदरसों के प्रधानाचार्यों के अनुसार इनमें आलमियत[1] (12वीं) और फज़ीलत[2] (B.A.) तक की डिग्री दी जाती है।

मदरसों की स्थापना व छात्राओं का नामाँकन निम्न तालिका में दर्शाया गया है—

क्रम सं.	*मदरसों के नाम*	*स्थापना*	*छात्राओं का नामाँकन*					
			1996	*1998*	*2000-01*	*2004-05*	*2007*	*2009*
1	जामियतुल बनात अल-इस्लामिया	1996	100	130	200	350	400	600
2	महाद उम्मे सलमा	1998	–	15	25	50	80	130
3	जामिया ख़ैरून्निसा (लिल बनात)	2000	–	–	15	50	80	130
4	आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कॉलेज	2005	–	–	–	80	150	250

मदरसों में छात्राओं का नामाँकन

जामिया नगर के सभी मदरसों में लड़कियों के नामाँकन में विभिन्नता है। जैसे—जामियतुल बनात में 2002 में लड़कियों की सँख्या 200 थी। 2004-05 में यह सँख्या 350 हो गई और 2009 तक यह सँख्या बढ़कर लगभग 600 हो गई। महाद उम्मे सलमा की स्थापना जब 1998 में हुई उस समय इस मदरसे में छात्राओं की सँख्या केवल 15 थी। 2004-05 में यह सँख्या बढ़कर 50 हो गई, 2007 में इस मदरसे में 80 लड़कियाँ थीं तथा आज 130 हैं। मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा में सन् 2000 में छात्राओं की सँख्या केवल 15 थी, 2004-05 में यह सँख्या बढ़कर 50 हो गई, 2007 में यह सँख्या 80 थी तथा अब 130 हैं। इसी प्रकार जब मदरसा आयशा सिद्दीक़ा की स्थापना 2005 में हुई तो उस समय छात्राओं की सँख्या 80 थी, 2007 में यह सँख्या 150 थी और अब यह सँख्या 250 है।

उपरोक्त प्राप्त आँकड़ों से यह ज्ञात होता है कि लड़कियों की सँख्या लगातार बढ़ रही है और मदरसों में लड़कियों की शिक्षा दिन-प्रतिदिन प्रचलित हो रही है।

नामाँकन के बारे में सभी मदरसों में वार्तालाप करने से पता चला कि उनके मदरसों में प्रवेश के लिए नामाँकन और अधिक बढ़ सकते हैं, परन्तु उनके पास अभी इतने स्रोत नहीं हैं। इस बारे में जामियतुल बनात के संस्थापक के अनुसार मदरसे का कोई विज्ञापन न करवाने पर भी उनके यहाँ लगभग 200 प्रवेश प्रत्येक वर्ष हो जाते हैं। उन्हीं के अनुसार विज्ञापन इसलिए नहीं

[1] *आलमियत*-बारहवीं कक्षा का समानांतर

[2] *फ़ज़ीलत*-बी.ए. (स्नातक) का समानांतर

करवाते हैं कि उसके कारण बहुत बच्चे आ जाएंगे और उनके पास जगह की कमी है। इसी बात को जामिया ख़ैरुन्निसा की प्रधानाचार्या भी कहती हैं कि हमारे पास स्रोतों की बहुत कमी है। इसी कारण छात्राओं की सँख्या में वृद्धि नहीं हो पाती है।

मदरसों का पाठ्यक्रम

सभी मदरसों का पाठ्यक्रम अलग-अलग विचारधाराओं पर आधारित है, परंतु सभी में पढ़ाए जाने वाले विषय लगभग समान हैं। सभी मदरसों में धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ आधुनिक शिक्षा भी दी जाती है। धार्मिक शिक्षा में कुरआन, हदीस, फ़िक़्ह, तफ़सीर, तारीख़, अरबी साहित्य, फ़ारसी आदि विषय तथा आधुनिक शिक्षा में, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गृह विज्ञान, गणित, अँग्रेज़ी, हिंदी, उर्दू तथा अरबी साहित्य विषय शामिल हैं। यद्यपि इन मदरसों में अधिकतर पाठ्यक्रम समान हैं परंतु कुछ किताबें भिन्न-भिन्न भी हैं। जिसकी अन्य मदरसों में शिक्षा नहीं दी जाती है। जैसे मदरसा जामियतुल बनात में *'बहिश्ती ज़ेवर'* तथा *'उम्मत की मिसाली माए'* नामक पुस्तकें पाठ्यक्रम में शामिल हैं। आधुनिक शिक्षा के लिए उपरोक्त सभी मदरसों के पाठ्यक्रमों में एन.सी.ई.आर.टी. की उर्दू माध्यम की पाठ्यपुस्तकें शामिल हैं। हिंदी तथा अँग्रेज़ी विषयों की किताबें भी एन.सी.ई.आर.टी. की ही पढ़ाई जाती हैं। सभी मदरसों में धार्मिक तथा आधुनिक शिक्षा उर्दू माध्यम के अंतर्गत दी जाती है।

लड़कियों द्वारा शिक्षा त्यागने (ड्रॉपआउट) के कारण

अधिकांशत: सभी मदरसों में लड़कियों की शिक्षा छूटने के कारण एक जैसे ही हैं। उपरोक्त चारों मदरसों के नाज़िमों[3] से वार्तालाप करने पर लड़कियों की पढ़ाई छूटने के जो कारण सामने आए हैं वे इस प्रकार हैं—

सबसे प्रथम समस्या सामाजिक व आर्थिक स्थिति की है। मदरसों में छात्राएँ अधिकतर निर्धन परिवारों से आती हैं, इसलिए पैसे की कमी के कारण उन्हें पढ़ाई छोड़कर जाना पड़ता है, जबकि उनमें बहुत-सी लड़कियाँ अपनी शिक्षा आगे भी जारी रखना चाहती हैं। दूसरी समस्या यह कि माँ-बाप भी इतने जागरूक नहीं हैं। वे अब भी समाज में शिक्षा के महत्व को नहीं समझ पा रहे हैं तथा लड़कियों की पढ़ाई बीच में ही छुड़वा देते हैं। इस प्रकार लड़कियों को अपनी आगे की शिक्षा के लिए परिवार द्वारा सहयोग नहीं मिल पाता है। तीसरी समस्या, लड़कियों की शादी (निकाह) की आ जाती है। अधिकतर मौलवियत[4] (10वीं) के बाद ही लड़कियों की शादी कर दी जाती है तथा अधिकाशत: लड़कियाँ शादी के बाद नहीं पढ़ पाती हैं और वे केवल गृहणी बनकर रह जाती हैं एवं आगे की शिक्षा प्राप्त करने का साहस नहीं जुटा पातीं। लेकिन कुछ ऐसी भी लड़कियाँ है जो अपनी शिक्षा को शादी के बाद भी जारी रखती हैं। चौथा कारण यह है कि प्राय: माता-पिता अपनी लड़कियों को धार्मिक शिक्षा से अवगत कराना चाहते हैं, इसलिए वे मदरसों में लड़कियों का

[3] नाज़िम—व्यवस्थापक, प्रबंधक, प्रधानाचार्य

[4] मौलवियत—दसवीं कक्षा का समानांतर

दाख़िला करवा देते हैं। उसमें से कुछ लड़कियाँ अँग्रेज़ी माध्यम स्कूलों से भी आती हैं जिनको अरबी, फ़ारसी आदि समझने में कठिनाई होती है, तो वे भी पढ़ाई छोड़कर चली जाती हैं और अपनी आगे की शिक्षा अँग्रेज़ी माध्यम के अंतर्गत आधुनिक स्कूलों के द्वारा ग्रहण करती हैं साथ ही निजी तौर पर धार्मिक शिक्षा भी अँग्रेज़ी भाषा में ही पढ़ती हैं।

इस प्रकार पैसों की कमी के कारण और परिवार द्वारा सहयोग न मिलने के कारण, छात्राएँ ड्रॉपआउट हो जाती हैं। ड्रॉपआउट होने वाली अधिकाँश छात्राएँ *मौलवियत* तक ही पहुँच पाती हैं। इसके अतिरिक्त वे किसी न किसी व्यवसायिक केंद्र से प्रशिक्षण कोर्स करती रहती हैं और कुछ अपनी *जद्दोजहद*[5] से आगे की शिक्षा प्राइवेट माध्यम से प्राप्त करने में सफल भी हो जाती हैं। परन्तु इतने कारणों के बावजूद भी 'जामियतुल बनात' के संस्थापक का कहना है कि उनके मदरसे में जो लड़कियाँ पढ़ने के लिए आती हैं उनमें से लगभग 90% *आलमियत* पूर्ण करके ही जाती हैं। मदरसा *जामिया*[6] ख़ैरून्निसा, महाद उम्मे सलमा और आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कॉलेज में भी स्थिति लगभग समान ही है।

मदरसों में भौतिक सुविधाएँ

सभी मदरसों का इंफ़रास्ट्रक्चर अलग-अलग है। जहाँ तक जामियतुल बनात[7] और आयशा सिद्दीक़ा की बात है तो वे बहुत अधिक विकसित कहे जा सकते हैं। जामियतुल बनात चार मंज़िला भवन है जबकि आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कालेज छः मंज़िला भवन है, मदरसा महाद उम्मे सलमा भी चार मंज़िला भवन है और मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा केवल दो मंज़िलीय इमारत है, लेकिन दोनों ही मदरसे बहुत छोटी-सी जगह पर स्थित हैं। केवल जामियतुल *बनात*[7] और आयशा सिद्दीक़ा मदरसों में छात्रवास की सुविधा है और दोनों ही मदरसे काफी बड़े क्षेत्र में स्थापित हैं। दोनों ही मदरसों में कक्षाएँ बहुत बड़ी-बड़ी हैं, हवा व रौशनी के लिए काफी बड़े-बड़े रौशनदान तथा खिड़कियाँ हैं। बिजली के चले जाने पर जनरेटर तथा इनवर्टर का पूरा प्रबंध है ताकि शिक्षकों तथा छात्राओं को कोई असुविधा न हो। यहाँ पर छात्रावास सुविधाएँ भी काफी अच्छी हैं। इन दोनों मदरसों के अतिरिक्त कहने को तो मदरसा महाद उम्मे सलमा चार

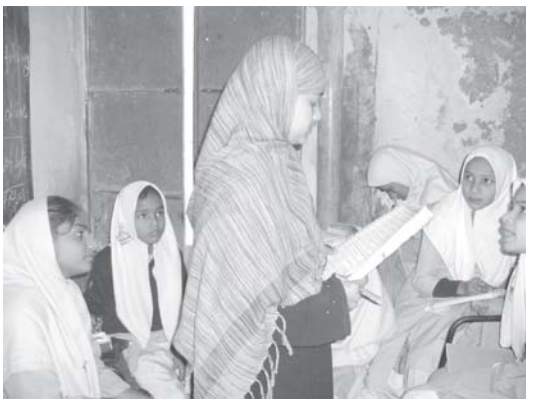

मदरसा जामिया ख़ैरून्निसा में एक ही कमरे में दो कक्षाओं की छात्राएं बैठी हुई

बहुमंजिली तथा जामिया ख़ैरुन्निसा दो बहुमंजिली इमारत है लेकिन ये दोनों मदरसे बहुत छोटी जगह पर स्थापित हैं तथा दोनों मदरसों की कक्षाएँ भी काफ़ी छोटी हैं।

[5] जद्दोजहद—प्रयास, कठिन परिश्रम

[6] जामिया—विश्वविद्यालय, यूनिवर्सिटी, समाज

[7] बनात—बिन्त का बहुवचन, बेटियाँ, पुत्रियाँ

जामिया ख़ैरुन्निसा में तो स्थिति यह है कि एक ही कमरे में दो-दो कक्षाओं का प्रबंध है। दोनों ही मदरसों में हवा और रौशनी का भी कोई इन्तज़ाम नहीं है। ऐसे में बिजली के चले जाने पर शिक्षकों तथा छात्राओं दोनों को बहुत असुविधा होती है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जामिया ख़ैरुन्निसा व महाद उम्मे सलमा दोनों ही मदरसों में जामियतुल बनात और आयशा सिद्दीक़ा मदरसों की तुलना में स्रोतों की बहुत अधिक कमी है।

मदरसों का कक्षा अभ्यास

जहाँ तक मदरसों में कक्षा अभ्यास का प्रश्न है तो सामान्यत: प्रत्येक मदरसे में पर्दा प्रथा है। यद्यपि इन चारों मदरसों में महिला शिक्षिकाओं की सँख्या अधिक है तथा पुरुष शिक्षक बहुत कम हैं तथापि मदरसा महाद उम्मे सलमा तथा मदरसा जामियतुल बनात में पर्दे का बहुत कठोरता से नियमन किया जाता है। इन मदरसों में पुरुष शिक्षक पर्दे की ओट से ही लड़कियों को शिक्षा देते हैं तथा लड़कियाँ पुरुष शिक्षकों के सामने नहीं आती हैं।

इस फोटो द्वारा मदरसा जामिया ख़ैरुन्निसा में स्रोतों की कमी को देखा जा सकता है

मदरसा जामियतुल बनात में तो शिक्षक कक्षा अभ्यास के दौरान व्याख्यान देने हेतु माइक का प्रयोग करते हैं किसी दूसरे कमरे से तथा कक्षा में लड़कियों के लिए शिक्षक द्वारा दिया जा रहा व्याख्यान सुनने की पूरी सुविधा होती है। कक्षा अभ्यास के दौरान कक्षा में देख-रेख के लिए एक शिक्षिका उपस्थित रहती हैं। यदि छात्राओं को कोई प्रश्न शिक्षक से पूछना होता है तो उसके लिए भी वे माइक का ही प्रयोग करती हैं। इस प्रकार मदरसा जामियतुल बनात में पुरुष शिक्षकों तथा छात्राओं के बीच अंत:क्रिया माइक के द्वारा होती है। मदरसा महाद उम्मे सलमा में भी छात्राएँ पुरुष अध्यापक का सामना नहीं करती हैं। इस मदरसे में लाउडस्पीकर या माइक का प्रबंध तो नहीं है परंतु कक्षा में पुरुष शिक्षक तथा छात्राओं के बीच एक बड़ा पर्दा कर दिया जाता है तथा इस प्रकार वे पर्दे की एक ओर अलग रहकर शिक्षा ग्रहण करती हैं। मदरसा आयशा सिद्दीक़ा शरीयत कॉलेज में छात्राएँ कक्षा में पुरुष शिक्षकों के सामने पढ़ती हैं परन्तु इस मदरसे में छात्राओं के लिए बुर्क़ा तथा चेहरे को

मदरसा जामियतुल बनात अल इस्लामिया में कक्षा अभ्यास के दौरान शिक्षक माइक के द्वारा किसी दूसरे कमरे से छात्राओं को व्याख्यान देते हुए